अध्याय :- २

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर

अनुक्रमणिका

२. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर

२. १. सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जीवन-कवन

२. २. विष्णु प्रभाकर का जीवन-कवन

२. ३. उपेन्द्रनाथ अश्क का जीवन-कवन

२. ४. मोहन राकेश का जीवन-कवन

२. ५. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का जीवन-कवन

२. ६. पाण्डेय बेचन शर्मा का जीवन-कवन

२. ७. चतुरसेन शास्त्री का जीवन-कवन

२. ८. कमलेश्वर का जीवन-कवन

२. ९. कृष्णा सोबती का जीवन-कवन

२. १०. अमृतलाल नागर का जीवन-कवन

२. ११. भीष्म साहनी का जीवन-कवन

२. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर

२. १. सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जीवन-कवन

हिन्दी साहित्य के नवोदय के सूत्रधार अज्ञेयजी का जन्म ७ मार्च, १९११ को गोरखपुर के समीप कसया अर्थात कुशीनगर (ज़िला-देवरिया) में हुआ और निधन ४ अप्रैल १९८७ में हुआ। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन था। अज्ञेयजी स्वाभाव से विद्रोही थे। उनकी विद्रोही भावना साहित्य में विविध रूपों में प्रतिफलित हुई। परंपरा विद्रोह, ब्रिटिश शासन के खिलाफ क्रांतिकारी योजनाएँ आदि उनकी विद्रोही भावना का ही परिणाम है। यायावरी प्रवृति के अज्ञेय बचपन से ही व्यापक जीवन से जुडते चले गए। छात्र जीवन में ही वे क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आ गये और तरह-तरह की क्रांतिकारी योजनाओं में शामिल होने लगे। इसी संदर्भ में वे कई बार जेल गये। जेल की यातनाओं से उपजा दुःख सबको माँजता है, इस सत्य की प्रतीति हुई। साहित्य सृजन के क्षेत्र में अज्ञेय ने एक साथ कवि, कथाकार, आलोचक, सम्पादक आदि विविध रूपों में साहित्य प्रेमियों को लुभाया तो व्यवहारिक जगत् में फोटोग्राफी, चर्म-शिल्प, पर्वतारोहण, सिलाई-कला आदि में लोगों को चौकाया भी।

अज्ञेय बीसवीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य के नवोदय के सूत्रधार है। कवि और गद्यकार दोनों रूपों में उन्होंने नयी दिशाओं का आविष्कार और परिष्कार किया। उन्होंने कविता को छायावादी अतिशय भावुकता और प्रगतिवादी एकांगी मानसिकता से अलग कर एक नई काव्यभूमि की ओर ले जाने का बीडा उठाया। बध्धमूल विचारों की जडे हिलाकर समकालीन साहित्यिक चेतना को नयी सक्रियता दी और उसे नयी सम्भावनाओं से भरा। नयी मनःस्थितियों, नये मूड और नये राग सम्बन्धों को अभिव्यक्ति का रास्ता खोला। भाषा को अपना संस्कार दिया।

अज्ञेय ने पहलीबार भाषा को मुख्य प्रश्न के रूप में देखा। 'नयी कविता' के कवियों में अज्ञेय पहले कवि है जिन्होंने भाषा की संकुचित केंचुल फाड़कर उसमें नया व्यापक और सारगर्भित अर्थ भरेन का अभियान छेडा। उनकी भाषा ने नवीन अर्थो की अभिव्यक्ति के लिए नया वातावरण रचा। कविता की तरह गद्य के क्षेत्र में भी अज्ञेय ने वस्तु चयन से लेकर शिल्प तक क्रांतिकारी और अभूतपूर्व प्रयोग किये। वस्तुविहीन कथानकों की परम्परा भी उन्होंने ही डाली। कथा-साहित्य में नये आयामों की स्थापना ने यह सिद्ध कर दिया कि सक्रिय बोध विकास की अभिव्यक्ति प्रचलित प्रणालियों से संभव नहीं है। हिन्दी निबंधों को छोटे निबंध के रूप में उन्होंने नया मोड दिया। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी अज्ञेय की सक्रिय भागीदारी रही। 'सैनिक', 'विशाल भारत', 'प्रतिक', 'दिनमान', 'नवभारत टाईम्स' आदि पत्र-कारिताओं के सम्पादक द्वारा उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में नये मापदण्ड स्थापित किये।

'अज्ञेयजी' ने सभी विधाओं में अपनी अद्‌भूत प्रयोगात्मक प्रगतिका परिचय दिया है। लेकिन उनका कवि व्यक्तित्व अधिक लोक प्रिय हुआ। इस क्षेत्र में उनका सबसे विशिष्ट अवदान यह है कि उन्होंने तत्कालीन परिवेश के अनुकूल कविता को जीवन की अनुरूपता में ढालकर नयी काव्यात्मक चेतना के लिए नया वातावरण रचा। उनके द्वारा सम्पादित 'तारसप्तक' ने कविता के क्षेत्र में एक आन्दोलन का सूत्रपात किया। यह आधुनिक भाव-बोध का प्रथम प्रस्फुट था। इसमें सम्पादित कवियों को राहों का अन्वेषण से बल आत्मान्वेषण पर आ गया। इसमें बडे कौशल से 'तारसप्तक' की परम्परा को आत्मनिष्ठ मोड दे दिया गया। 'तारसप्तक' की परम्परा को आत्मनिष्ठ मोड दे दिया गया। 'वस्तु-सत्य' निःशेष हो गया 'तथ्य' में और फिर 'तथ्य' भी रागात्मकता के अधीन होकर अपनी रही-सही 'वस्तुनिष्ठता' खौ बैठा। इस प्रकार वस्तु-सत्य सिमटकर आत्मसत्य हो गया। बाहर से भीतर की ओर मूड ने की इस प्रक्रिया ने समग्र काव्य चेतना को प्रभावित किया। अब सामाजिक परिवेश अनुभूति की प्रामाणिकता और रागात्मक संवेदना पर बल दिया जाने लगा। 'दूसरा सप्तक' के साथ-साथ नयी कविता ने जन्म लिया। इस तरह कविता के लिए नया वातावरण रचकर अज्ञेय ने कविता को नया मुहावरा दिया। काव्य विषयक नयी मान्यताओं चिन्तन-मनन को काव्य का रूप देकर संपूर्णतया काव्य के धरातल पर प्रतिष्ठित करने का महत्वपूर्ण कार्य अज्ञेय ने ही किया।

साहित्य के युगिन चिन्तन की सशक्त अभिव्यक्ति के लिए अज्ञेय ने साहित्य की सभी विधाओं को अपनाया। उनकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार है : कविता- 'भग्नदूत', 'चिन्ता', 'इत्यलम', 'हरी घास पर क्षण भरे', 'पूर्वा', 'सुनहले शैवाल', 'बावरा अहेरी', 'इन्द्रधनुष्य', 'शैदे हुए ये', 'अरी ओ करुणा प्रभामय', 'आँगन के पार द्वार', 'कितनी नावो में कितनी बार', 'क्योंकि मैं उसे जानता हूँ', 'मरुथल', 'सागर मुद्रा', 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ', 'महावृक्ष के नीचे', 'ऐसा कोई घर आपने देखा है', 'सदानीरा' (भाग-१/२) कहानी- 'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल', 'ये तेरे प्रतिरूप', 'कडिया और अन्य कहानियाँ', 'अमरवल्लरी और अन्य कहानियाँ'। उपन्यास- 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी'। निबंध- 'त्रिशंकु', 'आत्मनेपद', 'हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य', सबरंग और कुछ राग', 'शेषा', 'भवन्ती', 'अन्तरा', 'लिखि कागद कोरे', 'जोग लिखी', 'अद्यतन', 'आलवाल', 'संवत्सर'। यात्रा वृतांत- 'अरे यायावर रहेगा याद', 'एक बूंद सहसा उछली'। गीति नाट्य- 'उत्तर प्रियदर्शी'। सम्पादित- 'तारसप्तक', 'दूसरा सप्तक', 'तीसरा सप्तक', 'चौथा सप्तक', 'पुष्करिणी', 'रूपाम्बरा' आदि।

अपने समूचे लेखन कर्म में अज्ञेय किसी वाद से नहीं जुडे। उन्होंने वाद की प्रवृति को नकारकर प्रयोग को महत्व दिया। वे परम्परा और आधुनिकता की चर्चा करते है। आधुनिकता उनके लिए एक सिद्ध स्थिति नहीं वरन् संस्कारवान होने की एक प्रक्रिया रही है। उन्होंने अपने समय की मानवीय परिस्थितियों को ईमानदारी से देखा, अपने युग के महत्व को सच्चे कलाकार के नजरिये से व्यक्त किया।

व्यक्ति-चेतना अज्ञेय के चिन्तन का केन्द्र बनी, जिसे लक्ष्य करके उन्हें अहंवादी और असामाजिक करार दिया गया। जबकि उन्होंने सम्प्रेषण की समस्या और समाज के संदर्भ में मौलिक चिंतन और सामाजिक दायित्व को बराबर महत्व दिया है। उनमें व्यक्ति बोध को सामाजिक बोध से जोडने का भाव मौजूद है। अज्ञेय व्यक्ति को अनेक सम्भावनाओं का पुंज मानते है। मानव अपनी परिकल्पना में अर्थवत्ता की खोंन से जुडा रहा है। अज्ञेय के लेखन के केन्द्र में निहित व्यक्ति मुक्त है, मूल्य सर्जक है और जिम्मेदारी के अहसास से भरा हुआ भी।

दूसरे तक मूल्यबोध को पहुँचाना अज्ञेय साहित्यकार का दायित्व मानते है। यहाँ उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता है।

अज्ञेय ने अपने जीवन को अपने ढ़ंग से जगह बदल-बदलकर तरह-तरह से जाना और जिया। इससे उत्पन्न परितोष को कविता में उन्होंने इस तरह व्यक्त किया है- 'मैं मरूंगा सुखी क्योंकि तुमने जो जीवन दिया था। उसमें मैं निर्विकल्प खेला हूँ। खुले हाथों से मैंने उसे वारा है। मैं मरूँगा सुखी। मैंने जीवन की धज्जियाँ उडाई है।' व्यावहारिक जीवन में ही नहीं साहित्य के माध्यम से भी अज्ञेय ने जीवन में अंतःप्रवेश कर उसे समस्त अभिप्रायों में जाना। वे सृजनात्मक शब्द और स्वायत सत्ता के साथ आत्मालोचन और आत्मशोधन की प्रक्रिया से भी गुजरे है। यही वजह हैं कि उनकी कला-दृष्टि मनुष्य के रचनात्मक स्वरूप को समझने में भरपूर सहयोग देती है।

अज्ञेय ने भारत-पाकिस्तान विभाजन पर भी कई कहानियाँ लिखी है, जिनमें 'शरणदाता', 'लेटरबक्स', 'बदला', 'रमन्ते तत्र देवता', 'मुस्लिम मुस्लिम भाई भाई' एवम् 'नारंगियाँ' आदि कहानियों में विभाजन की विभिषिका को प्रस्तुत किया है। अज्ञेय की 'शरणदाता' कहानी में बाहरी परिस्थितियों के दबाव में संबंधों और मूल्यों को विघटित होने की प्रकिया के बीच मानवीय करुणा की शाश्वतता के प्रति आस्था के स्वर की गूँज है तो उनकी दूसरी कहानी 'रमन्ते तत्र देवता' में हिन्दू-मुस्लिम दंगे में कलकत्ता में रहनेवाली एक स्त्री अपने पति से बिछूड गई है। सरदार बिशनसिंह उसे संकट में देखकर उसकी सहायता करते है। उसे पति के साथ मिलने के लिए निश्चित किए गये स्थान पर पहुँचाते है। किंतु पति वहाँ नहीं मिलता और रात हो गई। सरदार साहब उस स्त्री को अपनी विधवा बहन के साथ गरुद्वारे में शरण दे देते है। सुबह होने पर बिशनसिंह उसे उसके घर पहुँचाने जाते है तो पति जिसने मुसीबत की रात स्वयं भी घर से बाहर ही बिताई थी। सहसा उसके चरित्र और बिशनसिंह के चरित्र को ही चुनौती देने लगता है। बिशनसिंह को अपना ही नहीं सिख जाती के अपमान का अहसास होने लगता है। वह पुनः सम्मानित सिक्खों के साथ उस स्त्री को उसके पति के पास लेकर जाते है। पति भयवश उसे घर में तो रख लेता है किंतु बिशनसिंह को उसके व्यवहार से लगता हैं कि स्त्री पर लाँछन और स्त्री-पुरुष संबंध की बात खत्म नहीं हुई और उस स्त्री का

COMPUTERISED

क्या होगा? यह प्रश्न आडा-तिरछा उनके सामने है। ऐसी स्थिति में स्त्रियों का अंत हत्या या आत्महत्या में होता है। वापस लाई गई स्त्रियों को उनके संबंधियों ने पहचान ने से ही इन्कार कर दिया था। स्त्री का चरित्र समाज की दृष्टि में इतना कच्छा धागा हैं कि केवल संदेह मात्र का झटका ही उसे जीवन जीने के अधिकार से वंचित कर सकता है।

समकालीन साहित्य के विकास में अज्ञेय की ऐतिहासिक भूमिका रही है। बीसवीं शताब्दी में हिन्दी और भारतीय साहित्य की स्थिति का निर्धारण करनेवाले रचनाकारों में उनका नाम हमेशा स्मरणीय रहेगा।

२. २. विष्णु प्रभाकर का जीवन-कवन

श्री विष्णु प्रभाकर का जन्म २१ जून, सन् १९१२ में मीरापुर जिला मुज्जफरनगर (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। और उनकी मृत्यु ११ अप्रैल, २००९ में हुई थी। उनका बचपन हिसार (पूर्वी पंजाब) में गुजरा। वहाँ पर उनकी प्रारंभिक शिक्षा सम्पन्न हुई। मीरापुर में पढ़ाई की सुविधा नहीं थी। माँ चाहती थी कि उसकी संतान पढ़-लिखकर कुछ बने इसलिए माताजी ने उन्हें मामा के पास हिसार में भेज दिया था। मामा आर्य समाजी थे। वहाँ पर उसे खूब पढ़ने का अवसर मिला। उन्होंने मुनशी प्रेमचंद, प्रसाद, रवीन्द्रनाथ टेगोर और शरद का साहित्य पढ़ा। सन् १९२६ में जब आठवी कक्षा में थे तो बाल-सखा को एक पत्र लिखा और अपना यह पत्र इसमें छप गया। इस प्रकार उसकी लिखने की प्रेरणा बदलती होती गई।

विष्णु प्रभाकर आठवी कक्षा में पढ़ते थे तब से आर्य समाज में दिक्षित हो गये थे। दसवीं कक्षा पास करने के बाद आर्य समाज, गुरद्वारे, मस्जिदे, जन-सभाओं में भाषण देना शुरू कर दिया। शुरू में 'प्रेम-बन्धु' के नाम से लिखने रहे। परिवार गरीबी के चुंगुन में फंस गया था। ऐसे में आगे की पढ़ाई के बारे में सोचना ही नहीं था। प्रभाकर का मन स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने के लिए मचल रहा था किंतु कुछ ऐसी परिस्थिति ने उसे सरकारी नौकरी

में जोड दिया। उस समय 'दीवाली' नामक कहानी लिखी। उनकी यह कहानी 'हिन्दी मिलापी' में छपी।

पण्डित हरिशंकर शर्मा, पण्डित संतराम चन्द्रगुप्त विद्यालंकार इत्यादि मित्र एवम् कहानीकारों ने उनकी कहानियों की खूब प्रशंसा की। उन दिनों 'स्नेह' कहानी बहुत ही प्रसिद्ध रही। प्रेमचंदजी और जैनेन्द्रजी को भी उन्होंने अपनी कहानियाँ भेजी थी। जैनेन्द्रजी ने उनकी कहानियों की खूब सराहना की। देखते ही देखते बाबू गुलाबराय, सर्वश्री सियारामशरण गुप्त, भगवती प्रसाद वाजपेयी, अज्ञेय, उपेन्द्रनाथ अश्क, आनन्द कौशल्यान इत्यादि ने उन्हें कहानी लेखन के रूप में अपना लिया। पंजाब विश्वविद्यालय से बी. ए. करने के बाद उन्होंने सरकारी नौकरी की। पन्द्रह वर्ष तक वे सरकारी कृषि विभाग में नौकरी करते रहे। सन् १९४४ में उन्होंने अपनी नौकरी छोडकर पूर्णतया साहित्य साधना में अपने को लगा दिया था।

विष्णु प्रभाकर वास्तव में 'हिन्दी प्रभाकर' है। वह 'दि इण्डियन पी. ई. एन. तथा इण्डियन कौंउसिल ऑफ वल्ड अफेयर्स' के सभासद थे। वे आकाशवाणी दिल्ली के भूतपूर्व ड्रामा प्रोड्युसर है। 'मानव धर्म' (मातृभूमि अंक), 'ज्ञानोदय' (शांति अंक), 'जीवन साहित्य' तथा 'बाल-भारत' के वे सम्पादक रहे।

प्रभाकरजी सन् १९३४ से नियमित रूप से साहित्य रचना कर रहे है। साहित्य की अनेक विधाओं में उन्होंने अपनी लेखनी चलाई है। कविता, कहानी, लेख सब कुछ लिखा, किंतु अधिकतर कहानियाँ ही लिखी। लगभग २५० तक उन्होंने कहानियाँ लिखी है। सन् १९३९ से वे नियमित रूप से नाटक और रेखाचित्र भी लिखने लगे। सन् १९४२ से रेडियों के सम्पर्क में आने से उन्होंने ध्वनि नाटक एवम् देश की अनेक प्रमुख भाषाओं में अनुदित हुई है। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय कहानी प्रतियोगिता में प्रथम और चौथा स्थान प्राप्त किया है। भारत सरकार से पौढ़ शिक्षा के लिए तीन हजार तथा भारत सरकार से अन्य पुरस्कार भी उन्होंने प्राप्त किए है। वे प्रसिद्ध नाटककार है। उनके रेडियों नाटकों ने बहुत ही ख्याति प्राप्त की है। उन्होंने पहला नाटक 'हत्या के बाद' सन् १९३९ में लिखा था और 'हंस' प्रकाशित हुआ था।

प्रभाकर का समस्त साहित्य यथार्थवाद की नींव पर खडा है। उसमें आध्यात्मिकता का पुट भी मिलता है। उनकी रचनाएँ मानव हृदय को सीधे स्पर्श करती है। उनके एकांकी नाटक

का मुख्य उद्देश्य हिंसा के स्थान पर प्रेम-तृष्णा के स्थान पर त्याग तथा आशिव के स्थान पर शिव प्रस्तुत करता है। वे जो कुछ कहना चाहते है। उसे घटनाओं के माध्यम से पाठकों तथा दर्शकों तक पहुँचाते है। इससे नाटक एवम् एकांकियों की स्वाभाविकता अक्षुण बनी रहती है और नीरसता-शुष्कता नहीं आने पाती है।

विष्णु प्रभाकर की प्रकाशित कृतिया इस प्रकार है। उपन्यास- 'ढ़लती रात', 'निशिकांत', 'तटके बन्धन', 'स्वप्नमयी', 'दर्पण का व्यक्ति', 'परछाई', 'कोई तो'। कहानी संग्रह- 'रहमान का बेटा', 'जिन्दगी के थपेडे', 'संघर्ष के बाद', 'धरती अब भी घूम रही है', 'सफर के साथी', 'खण्डित पूजा', 'साचे और कला', 'मेरी तैतीस कहानियाँ', 'मेरा वतन', 'खिलौने', आदि बहुचर्चित कहानी संग्रह है। उन सभी कहानी संग्रहों में से उनकी विभाजन पर लिखी गई कहानियाँ इस प्रकार है- 'मेरा वतन', 'मेरा बटा', 'अगम अथाह है', 'अधुरी कहानी', 'तांगेवाला', 'सफर का साथी', 'वह रास्ता', 'पडोशी', 'हिन्दू', 'मैं जिंदा रहूंगा', 'शमशू मिस्त्री' आदि। नाटक- नव प्रभात', 'समाधि', 'डाक्टर', 'युगे-युगे कांति', 'टूटते परिवेश', 'कुहासा और किरण', 'टगर', 'बन्दिनी', 'सत्ता के आर-पार', 'अब और नहीं' 'गान्धार की भिक्षुणी'। एकांकी संग्रह- 'इन्सान और अन्य एकांकी', 'प्रकाश और परछाई', 'बाहर एकांकी', 'दस बजे रात', 'ये रेखाएँ ये दायरे', 'उँचा पर्वत गहरा सागर', मेरे श्रेष्ठ रंग एकांकी', 'तीसरा आदमी', 'नये एकांकी', 'डरे हुए लोग', 'मैं भी मानव हूँ' इत्यादि उनके प्रसिद्ध एकांकी संग्रह माने जाते है। जीवनी-संस्मरण- 'आवारा मसीहा', सन् १९४७, 'अमर शहीद भगतसिंह' सन् १९७६, 'सरदार वल्लभभाई पटेल' सन् १९७६, 'जाने अनजाने', 'कुछ शब्द कुछ रेखाए', 'यादो की तीर्थयात्रा' इत्यादि। यात्रा-वृतांत- 'जमाना गंगा के नैहर में', 'हंसते निर्झर दहकती भट्ठी', 'अभियान और यात्राएँ', 'ज्योंतिपुंज', 'हिमालय' इत्यादि। विचार निबंध- 'सन समाज और संस्कृति', 'एक समग्र दृष्टि', 'क्या खोया, क्या पाया' इत्यादि। जीवनी साहित्य- 'शरदचन्द्र', 'बकिमचन्द्र' इत्यादि। रूपक संग्रह- 'स्वाधिनता संग्राम', 'अनुदित एवम् लिंकन' इत्यादि।

प्रभाकरजी ने भारत विभाजन के समय हुए दंगे-फसादों पर कई कहानिया लिखी है जिनमें 'मेरा वतन' कहानी में अपनी धरती से, अपनी क्षेत्रीय सभ्यता-संस्कृति ओर समाज से

उखडे-टूटे हुए उन व्यक्तियों की यातना-यात्रा हैं जो विभाजन के हादसे के यथार्थ को सह नहीं पा रहे है और उनकी विक्षिप्तता उन्हें आगे नहीं पीछे की ओर खींचती हैं। बदली हुई परिस्थिति में अपने वतन में व्यक्ति इतना बेगाना, इतना अजनबी हो गया हैं कि उसे भारत में पाकिस्तान का जासूस समझकर गोली मार दी जाती है और भारत में पाकिस्तान का नागरिक समझकर जेल में डाल दिया जाता हैं। व्यक्ति हिन्दू या मुसलमान भी अब नहीं रह गया हैं। वह हिन्दुस्तानी या पाकिस्तानी हो गया हैं। विभाजन से त्रस्त व्यक्ति न अतित से टूट पा रहा हैं और न वर्तमान से जूड पा रहा हैं। इस गहरी खींचतान ने उसे विक्षिप्त या पूरा पागल बना दिया हैं। कहानी की संवेदना बहुत गहरी है। और विभाजन की त्रासदी का जीवन से मृत्यु तक की यातना का करूण चित्र प्रस्तुत करती है।

इसके अतिरिक्त विष्णु प्रभाकर का बाल साहित्य विपुल मात्रा में मिलता है। 'जादू की गाय' उसका पूरा नाटक सन् १९७२ में प्रकाशित हुआ।

२. ३. उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का जीवन-कवन

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का जन्म १४ दिसम्बर, १९१० को पंजाब के जालन्धर शहर में हुआ था और निधन १९ जनवरी, १९९६ में हुआ था। उन्होंने अपनी शैक्षिक योग्यताएँ इसी शहर में पूरी की और उनकी साहित्यिक अभिरूचियाँ भी इसी शहर में ही पनपी थी। अश्कजी की सृजनात्मक क्षमता बचपन में ही उजागर होने लगी थी और वे बचपन में ही लेखक, सम्पादक, अभिनेता, निर्देशक और श्रेष्ठवक्ता बनने के स्वप्न देखने लगे। अपने सपनों को यथार्थ के धरातल पर उतारने के लिए उन्होंने जीवन और सर्जन दोनों स्तरों पर निरंतर सर्जन किया। संघर्षो से जूझते हुएँ वे अध्यापन, पत्रकारिता, वकालत, रेडियो, फिल्म, रंगमंच और प्रकाशन आदि विभिन्न कार्यक्षेत्र में सक्रिय हो अनुभवों की विराट संपदा बटोरते रहे। लेकिन १९४८ में यक्ष्मा से रोगमुक्त होने के पश्चात् उन्होंने 'मसिजीवी' होकर अपना जीवन चलाया।

पंजाबी से उर्दू और फिर उर्दू से हिन्दी में प्रवेश करनेवाले उपेन्द्रनाथ अश्क ऐसे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रचनाकार है, जिन्होंने हिन्दी साहित्य की हर विधा में अपनी वैचारिक सम्पन्नता, अनुभूति की तरलता और रचनात्मक कौशल्य का प्रमाण दिया। उन्होंने प्रेमचंद से शुरू हुई कहानी कला के नयी ऊँचाईयाँ प्रदान की। नयी कहानी आन्दोलन शुरू होने से पहले अश्कजी ने शहरी मध्यमवर्गीय जीवन की ठोस वास्तविकताओं को अपने साहित्य में उतारा। यथार्थवादी रंगमंच से नाटक का गहरा रिस्ता कायम कर उन्होंने हिन्दी नाटकों की आधुनिक संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बना दिया। वे उर्दू और हिन्दी के बीच बहुत बडी कडी के रूप में उभरकर आये।

अश्कजी की मातृभाषा पंजाबी थी, मगर उन्होंने १९२६ में उर्दू में लिखना शुरू किया। १९३३-३४ में उर्दू के साथ-साथ वे हिन्दी लेखन में भी उतरे। उनके प्रथम हिन्दी कहानी संग्रह 'जुदाई की शाम का गीत' (१९३३) से पहले उर्दू में उनके 'नवरत्न' और 'औरत की फितरत' दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके थे। हिन्दी में अपने को परदेशी माननेवाले अश्कजी ने बहुत संभालकर, माँज-संवारकर जिस हिन्दी को अपनी रचनाओं में गढ़ा वह जीवन्त और सक्षम भाषा का नमूना बन गयी।

अश्कजी ने प्रेमचंद के जमाने में लेखन शुरू किया। उन्होंने अपने उपन्यास 'सितारे के खेल' प्रकाशित होने से पहले प्रेमचंद का 'गोदान' पढ़ा प्रभावित हुए। लेकिन उन्होंने अपने समकालीनों की तरह प्रेमचंद का अनुकरण करते हुए गावों की ओर दौड नहीं लगाई, क्योंकि वह छोटा प्रेमचंद नहीं बनना चाहते थे। वे उपेन्द्रनाथ ही बने रहना चाहते थे। इसलिए 'गोदान' की प्रेरणा या उन्होंने अपने परिवेश और वर्ग की तमाम विसंगतियों को कथा-साहित्य में उजागर किया। भारत में पनप रहे औधोगिकीकरण एवम् नौकरशाही के फलस्वरूप मुखर हो रहे मध्यवर्ग को उन्होंने अपने लेखन का केन्द्र बनाया और उसमें विभिन्न मूल्यों और भाव-भूमि की आकस्मिकता को प्रभावित करनेवाला चित्र खींचा। वे नयी कहानी आन्दोलन से पहले के ऐसे लेखक है जिन्होंने प्रेमचंद की कथा-साहित्य परम्परा से अलग हटकर शहरी मध्यवर्ग के जीवन में पनप रही चालाकी, मक्कारी, धूर्तता, भावुकता, द्वन्द्व और उर्न्तहीन सपनों को अपना निशाना बनाया।

अश्कजी को उपन्यासकार और नाटककार के रूप में अधिक ख्याति मिली। हिन्दी नाटकों को परिवर्तीत चेतना पहलीबार अश्कजी के नाटकों के माध्यम से प्रकाश में आयी। सामयिक परिवेश की नयी चुनौतियों को नये-नये प्रयोगों में उनके नाटकों में अभिव्यक्ति मिली। सहजता से अभिनीत किये जा सकनेवाले नाटकों में नाटककार अश्क इतने पसंद किये गये कि उनके लिए कहा गया कि उन्हें नाटककार का लिबास पहन ने की आवश्यकता नहीं है। उनकी स्वाभाविक सूझ और अभिव्यक्ति नाटकीयता में पत्नी है।' उपन्यासों में अश्कजी ने व्यक्ति सत्य और सामाजिक सत्य की गहराई में उतरकर मनुष्य की तथा मनुष्य की बाह्य और आंतरिक खूबियों के विश्लेषण के साथ वास्तविकता का ताना-बाना तैयार कर यथार्थवादी परम्परा को आगे बढ़ाया।

अश्कजी के लिए लिखना जीने सरीखा था। उनका कहना था- 'लिखता हूँ तो लगता है, जीता हूँ।' लिखने और जीने के इस कम में उन्होंने हर विधा में हिन्दी को अपना विपुल साहित्य सौपा। उनकी उल्लेखनीय प्रकाशित कृतियाँ इस प्रकार है - कविता- 'दीप जलेगा', 'बरगद की बेटी', 'चाँदनी रात और अजगर', 'अदृश्य नदी', 'खोया हुआ प्रभावमण्डल', 'सड़कों पर ढ़ले सायें', 'बकरोटे की ढ़लान पर'। कहानी- 'जुदाई की शाम का गीत', 'छोटे', 'बैगन का पौधा', 'काले साहब', 'निशानियाँ', 'मोती', 'माँ', 'उबाल और अन्य कहानियाँ' 'पिंजरा', 'दो धारा', कहानी लेखिका और जेहलम के सात पुल', 'अश्क की श्रेष्ठ कहानियाँ', 'सत्तर श्रेष्ठ कहानियाँ'। उपन्यास- 'सितारों के खेल', 'गिरती दीवारें', 'शहर में घूमता आईना', 'एक नन्हीं किन्दील', 'बान्धों न नाव इस ठोच', 'बडी-बडी आँखे', 'गरम राख', 'पत्थर अल पत्थर', 'एक रात का नरक', 'बर्फ का दर्द', 'निमिषा', नाटक- 'जय पराजय', 'स्वर्ग की झलक', 'छठा बेटा', 'अलग-अलग रास्ते', 'कैद', 'उडान', 'भँवर', 'पैंतरे', 'अंजो दीदी', 'बडे खिलाडी'। एकांकी- 'परदा उठाओं परदा गिराओं', 'साहब को जुकाम है', 'तूफान से पहले', 'चरवाहे', 'देवताओं की छाया में', 'पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी' आलोचना- 'अन्वेषण की सहयात्रा', 'हिन्दी कहानी : एक अन्तरंग परिचय', 'हिन्दी नाटक और रंगमंच', 'उर्दू काव्य की एक नयी धारा', 'हिन्दी कहानी और फैशन'। संस्मरण- 'चेहरे

अनेक', 'परतों के आर-पार', 'मण्टो : मेरा दुश्मन', 'रेखाएँ और चित्र', 'आसमो और भी है', 'ज्यादा अपनी कम परायी', 'शिकायते और शिकायते' आदि।

अभिव्यंजना की दृष्टि से अश्कजी द्वारा किये नये-नये प्रयोग भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। रचना में रोचकता और कौतूहल पैदा करनेवाले अश्कजी भाषा के संदर्भ में सहजता और सरलता के कायल थे। अश्कजी की कोशिश यहीं रही हैं कि वे अनुभूतियों की सच्चाई और खरेपन तथा कला और शिल्प की सौष्ठवता के साथ अपने वर्ग और समाज का चित्रण करें और अन्त तक उनकी यह कोशिश जारी रही। साहित्यिक वादों, चालू नारों और सैद्धांतिक घोषणाओं से मुक्त रहकर उन्होंने जीवन से सीधा सम्पर्क गांठकर साहित्य में जीवन को सृजा। नयी कहानी आन्दोलन के दिनों में 'संकेत' नामक संकलन सम्पादित कर नयी कहानी के निर्माण में भी अश्कजी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आज हिन्दी कहानी, उपन्यास और नाटक की कोई भी चर्चा उपेन्दनाथ अश्क के बिना अधूरी है।

२. ४. मोहन राकेश का जीवन-कवन

मोहन राकेश का पूरा नाम मदन मोहन करमचंद गुगलाणी है। उनका जन्म ०८ फरवरी, १९२५ में अमृतसर में हुआ था और दिल्ली में हृदय की गति रूक जाने से ०३ दिसम्बर, १९७२ में मृत्यु हुई। पति का नाम करमचंद गुगलाणी था। १६ वर्ष की आयु में परिवार की जिम्मेदारी सर पर आ गई थी। पिता की मृत्यु से पहले मोहन राकेश संस्कृत में लिखते थे। पिता की मृत्यु के बाद हिन्दी में लिखने लगे। पंजाबी उनकी मातृभाषा थी। मोहन राकेश हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी एवम् अंग्रेजी के अच्छे ज्ञाता थे। उनके पिता बडे विख्यात एडवोकेट थे। उनकी पहली कहानी 'नन्ही' १७ मई, १९४४ में लाहौर में लिखी गई थी। राकेशजी के डायरी के अनुसार 'भीक्षु' कहानी पहली कहानी है। भीक्षु कहानी के आधार पर जो नाटक लिखा गया वह है 'आषाढ़ का एक दिन'। 'नन्ही' कहानी क्या है? उस यथार्थ की शुरूआत है जो राकेशजी के साहित्य का आधार है।

राकेशजी की साहित्यिक हकिकत का आधार क्या है? राकेशजी की जिन्दगी की हकिकत उसके साहित्य की हकिकत है। राकेशजी के दोस्त कौन थे? मोहन चोपड़ा, कमलेश्वर, धर्मवीर भारती, उपेन्द्रनाथ अश्क, ओम प्रकाश शर्मा, गिरधारी लाल आदि। राकेशजी ने तीन बार विवाह किया था। पहली पत्नी अहंकारी एवम् दहरादुन में नौकरी करती थी। जो राकेश को स्वीकार नहीं था। जिनकी वजह से सम्बन्ध विच्छेद हुआ। दूसरी अपनी लेखक मित्र मोहन चोपडा की बहन से १९६० में हुआ। उसे मानसिक अस्थिरता होने के कारण छूट्टी दे दी।

मोहन राकेश ने हिन्दी में गद्य की सभी भाषाओं में अपना योगदान दिया है। उनकी साहित्यिक कृतियाँ इस प्रकार है। उपन्यास- 'अंधेरे बन्ध कमरे', 'न जानेवाला कल', 'अंतराल'। कहानियाँ- 'इन्सान के खण्डहर', 'नये बादल', 'जानवर और जानवर', 'एक ओर जिन्दगी', 'आखरी सामान', 'मल्बे का मालिक', 'परमात्मा का कुत्ता', 'क्लेम', 'कम्बल'। राकेशजी के कहानी संग्रह चार भागों में विभक्त है- 'क्वाटर', 'पहचान', 'वारिस', 'एक घटना'। नाटक- 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरो के राजहंस', 'आधे अधूरे', 'पैरो तले की जमीन'। एकांकी संग्रह- 'अण्डे के छिलके', 'सिपाई की माँ', 'बहुत बडा सवाल'। अनय कृतिया- 'आखरी चट्टान तक क्या है?' निबंध- 'परिवेश' 'बकलम खुद'। बाल कहानी संग्रह- 'बिना हाड-मास के आदमी'। प्रमुख जीवनी- 'समय सारथी'। अनुवाद- 'अमिताभ शाकुंतलम', 'मृच्छकटिक', 'हिसोसिया के फूल'।

मोहन राकेश ने भारत पाकिस्तान विभाजन के समय हुए दंगे की करुण आख्यायिका अपनी विभाजन वाली कहानियों में प्रस्तुत की है। जिनमें 'मलबे का मालिक' कहानी में साढ़े सात साल बाद मुसलमानों की टोली हाकी का मैच देखने लाहौर से अमृतसर आयी है। टोली का एक सदस्य गनी मियां भी है। उसने अपने मकान के मलबे को पहचान लिया है। पहलवान रक्खा अपने आपको उसका मालिक कहता है। वह गनी परिवार का मित्र और विश्वासपात्र था। धृणा के उन्माद में उसी ने गनी के पुत्र को मार डाला। उसकी पुत्रवधू को बलात्कार करके नदी में बहा दिया। गनी इस सच्चाई से अनजान था और रक्खा पश्चाताप में गल रहा था, एक ओर रक्खा का वहशी क्रूर रुप, दूसरी ओर गनी का सहज, सरल विश्वास और स्नेह विरोधी स्थितियों की विडम्बना को बरबस उभार देता है- मेरे लिए चिराग नहीं तो तुम लोग

तो हो। मुझे आकर इतनी तसल्ली हुयी कि उस जमाने की कोई यादगार तो है। मैंने तुमको देख लिया तो चिराग को देख लिया। रक्खा का पश्चाताप और गनी का सहज विश्वास मानवीय करुणा के आधार को मजबूत बनाता है। विभाजन से बने 'मलबे का मालिक' न रक्खा है न गनी बल्कि एक कुत्ता है, जो अलगाववादी राजनीति का प्रतीक प्रतीत होता है। विभाजन के व्यर्थता बोध में मानवीय करुणा की निरन्तरता का बोध उपजा है। ऐसी उनकी 'परमात्मा का कुत्ता', 'क्लेम' एवम् 'कम्बल' आदि कहानियाँ है।

इस प्रकार मोहन राकेश ने अपने युग के समर्थ कहानीकार के रूप में उभरकर हमारे सामने आये। उनकी कहानियों में व्यक्ति के साधारण जीवन में जो कुछ मानवीय और असाधारण है वह निच्छल प्रेम और करुणा के श्रोत में प्रवाहित है। राकेश भले ही नये साहित्य युग के निर्माता हो परंतु वह एक नयी विचार शैली और नये दर्शन के उद्भावक भी रहे है।

२. ५. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का जीवन-कवन

श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का कहानी रचनाकाल सन् १९२५ से आरंभ होता है। उन दिनों चन्द्रगुप्त विद्यालंकार गुरुकुल कांगडी में पढ़ते थे। वहाँ प्रति वर्ष एक कहानी संमेलन हुआ करता था, जिसमें बडे-बडे कहानीकार आमंत्रित किये जाते थे और अपनी-अपनी रचनाए सुनाते थे। श्री चन्द्रगुप्तजी ने भी एक संमेलन में अपनी एक समस्या प्रधान रचना पढ़ी थी। तब तक बडे-बडे कहानीकारों की रचनायें सुनायी चुकी थी। जब इनकी कहानी समाप्त हुई तो जनता ने हर्ष से करतल ध्वनि की और तब इन्हें ज्ञात हुआ कि जनता ने उनकी रचना को बडी तन्मयता से सुना था। यह कहानी असपृश्यता की समस्या को लेकर लिखी गयी थी और बड़ी सफल रहीं थी। इसी कहानी से उनको प्रतिभा की छाप लग गयी। सन् १९२५-३० के मध्य उनकी 'गोरा', 'बचपन', 'सन्देह', 'आँसू', 'शराबी', 'भय का राज्य', 'पगली' आदि कहानियाँ लिखी गई। ये विशाल भारत में

प्रकाशित हुई। इनमें से प्रत्येक रचनाएँ अपना पृथक अस्तित्व रखती है। प्रत्येक का भाव और कथानक भी भिन्न है।

उदाहरण के लिए 'गोरा' एक बैल की कहानी है, जिसका मालिक उसे बछड़े के रूप में गीदडों से बचाता है और बडा करता है। बैल के जीवन में मानव वृतियों को बडी कुशलता से सँजाया गया है। दूसरी कहानी 'बचपन' की पृष्ठभूमि ईरान है। 'संदेह' कहानी में भारतीय क्रांति की पृष्ठभूमि है। एक कन्या क्रांतिकारिणी बनती है। एक क्रांतिकारी की, जो उसका गुप्त प्रेमी भी है, सहायता करती है। 'आँसू' उनकी एक पौराणिक कहानी है। इसका कथानक भी नये रूप का और नई कल्पना से भरा है। 'शराबी' कहानी में बहुत दुःखी व्यक्ति का चित्रण है। मूलतः वह बुरा आदमी नहीं है पर सामाजिक और आर्थिक निर्बलतायें उसे शराबी बना देती है। 'भय का राज्य' कहानी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के युग में देश में व्याप्त भय का चित्रण है। इसका कथानक दिलचस्प है। 'पगली' कहानी में हिन्दू-मुस्लिम समस्या को लिया गया है।

सन् १९३१ से १९४६ तक इसकी 'गुलाब', 'सिकन्दर', 'डाकू', 'टाँगेवाला', 'दो कब्रें', 'जाल', 'प्रथम मृत्यु', 'कामराज', 'हूक', 'यार', 'राधा', 'निम्बो', 'कबूतर', 'रेलगाडी में', 'दुर्भाग्य', 'एक सप्ताह', 'क ख ग', 'छतीस घण्टे', 'दो पहलू', 'चोट', 'उत्तेजना', 'मजार', 'मास्टर साहब' एवम् 'पतझड' आदि कहानियाँ प्रकाशित हुई।

श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकारजी ने उक्त कहानियों में से 'मास्टर साहब' एवम् 'पतझड़' ये दो कहानियाँ भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय हिन्दू-मुस्लिम इन दो जातियों के बीच जो साम्प्रदायिक समस्या उत्पन्न हुई इस पृष्ठभूमि पर लिखी है।

भारत-पाकिस्तान विभाजन की संवेदना को रूपायित करने वाली 'मास्टर साहब' चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की एक श्रेष्ठ कहानी है। विभाजन के समय के दंगों का हृदय विदारक चित्र इस कहानी में प्रस्तुत किया गया है। साम्प्रदायिक दंगों में किस प्रकार विवेकहीनता और क्षणिक जोश के कारण व्यक्ति उचित-अनुचित का ध्यान किए बिना कुछ भी कर बैठता है। व्यक्ति की प्रतिहिंसा की भावना यहाँ प्रमुख होती है और यही इन कहानी में चित्रित किया गया है। बूढ़े मास्टर साहब दंगे वाली रात को अपने खेत के मचान पर थे। सबेरा होने पर जब गाँव में पहुँचे तो देखा, सारा गाँव जल रहाँ है। घर पहुँच ने तक सारा घर आग की भयंकर

लपटों में स्वाहा हो गया था। सभी पारिवारिकजन आग के मुँह में समा गये थे पर निम्मो बच गई थी। मास्टर साहब को मालूम हुँआ कि दंगाई उसे अपने साथ ले चले गये है। पता चलने पर मास्टर साहब दंगाईयों के नेता गुलाम रसूल के घर पहुँचे। दंगाईयों ने मास्टर साहब को घेर लिया, पर गुलाम रसूल चूँकि मास्टर साहब का पढ़ाया हुआ था इसलिए मास्टर साहब के प्रति उसके मन में श्रद्धा एवम् सद्भाव जगा और उसने मास्टर साहब से कहा निम्मो के साथ मेरी हिफाजत में तुम चाहे जहाँ जा सकोगे। परिचय के स्तर पर सहानुभूति का जाग्रत होना इस कहानी में दृष्टिगत होता है। अगर गुलाम रसूल मास्टर साहब का शिष्य नहीं होता तो शायद ये मुसलमान दंगाई मास्टर साहब और निम्मो को जिन्दा नहीं छोडते। कहानी यथार्थ स्थिति का सटीक बयान करती है।

२. ६. पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' का जीवन-कवन

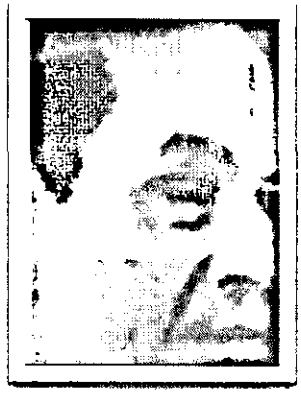

क्रांतिकारी कहानी के जन्मदाता पाण्डेय बेचन शर्मा का जन्म सन् १९०० ई. में मीरजापुर जिले के अतर्गत चुनार में हुआ था और निधन २३ मार्च, १९६७ को दिल्ली में हुआ। स्वभाव से अक्खड, तेवर से उग्र और जीवन शैली में स्वच्छन्दवादी सोच रखनेवाले उग्रजी के नामकरण की गाथा बडी दिलचस्पी है। जीवन के कडवे अनुभवों ने उनके भीतर विद्रोह और उग्रता भर दी थी। उनके लगभग एक दर्जन भाई-बहन असमय मृत्यु का शिकार हो गए थे। इसलिए तन्कालीन अन्धविश्वासों के अनुसार पैदा होते ही उन्हें एक टके में बेच दिया गया था, इसी से उनका नाम पड़ा 'बेचन'। उग्रता और बेचन के मिलाप से उन्हें पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' के नाम से जाना गया।

पाण्डेय बेचन शर्मा अपनी शैली का निराला कौशल लेकर आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य में उतरे। वे अपने समय से आगे के रचनाकार थे। उनकी आधुनिकता और स्वच्छन्दता का तेवर आगे आनेवाले दिनों का तेवर था। यथार्थवादी कथ्य और पात्रों को उन्होंने प्रकृतिवादी शैली में बहुत भुलेपन के साथ सामने रखा। शैली और कथ्य के चयन में अपूर्व दुःसाहस का परिचय

देकर उन्होंने समकालीनों को न केवल चौकाया बल्कि विक्षुब्ध भी किया। वे अपने समय की मुख्यधारा के विरुद्ध बढ़ने की ताकत रखनेवाले रचनाकार थे। क्रांतिकारी कहानी के जन्मदाता माने जानेवाले उग्रजी ने सामाजिक, रानीतिक सवालों के लिए नयी संघर्षनीति का खुलासा किया।

पाण्डेय बेचन शर्मा ने स्वच्छन्द और व्यवस्था विरोधी दृष्टि के चलते व्यक्ति के जीवन और परिस्थितियों का सच्चा लेखा-जोखा प्रस्तुत किया। उनकी मौलिकता भी यहीं थी कि उन्होंने जीवन के अछूते और अनजाने पक्षों और विषयों को अपनी बेबाक अव्यिक्ति से बेनकाब कर दिया है। उनकी पुस्तक 'चाकलेट' ने साहित्यिक जगत में अच्छा-खासा आन्दोलन खडा कर दिया। लीक से हटकर सृजित इस तरह के साहित्य को बनारसीदास चतुर्वेदी ने घासलेटी साहित्य कहकर तिरस्कृत किया और उसे मुख्यधारा से काटने की कोशिष की। उनके इस आन्दोलन को अनजाने में महात्मा गांधीजी की सहमतिसूचक सम्मति भी मिल गई। लेकिन जब गांधीजी ने इस पुस्तक को पढ़ा तो उन्होंने उसे धृणित साहित्य मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने चतुर्वेदीजी को पत्र लिखा- चोकलेट नामक पुस्तक पर जो पत्र था उसकों यंग इण्ड़िया के लिए नोट लिखकर भेज दिया। पुस्तक तो पढ़ी नहीं थी। टिका केवल आपके पत्र पर निर्भर थी। मैंने सोचा इस तरह टिका करना उचित नहीं होगा, पुस्तक पढ़नी चाहिए। मैंने पुस्तक आज खत्म की। मेरे मन पर जो असर हुआ आप पर नहीं हुआ है। मैं पुस्तक का हेतु शुद्ध मानता हूँ। इसका असर अच्छा पडता है या बुग मुझे मालुम नहीं है। आपके पत्र का पेज अब खुलवा दूंगा।

सृजनात्मक कार्यो के प्रति उसका रुझान उन्हें शिक्षाकाल में ही उत्प्रेरित करने लगा। शिक्षा कम के बाधित होने पर आँचलिक नाटक मण्डलियों में शामिल होकर उन्होंने अपनी अभिनय क्षमता को विकसित किया। इसी दौरान उन्होंने विचारोंतेजक लेख लिखने शुरू कर दिये। फिर स्वाधीनता आन्दोलन छिडा और वे उसमें कूद पडे। जेल और जीवन की यातनाओं से जूझे। जेल से छूटे तो 'अष्टावक' नाम से 'आज' में राष्ट्रीय कहानियाँ लिखने लगे। सृजनात्मक लेखन के साथ-साथ उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी दखल दिया और अपने भीतर छिपे जुझारू और संघर्षशील पत्रकार से परिचय करया। उन्होंने 'मतवाला', 'आज', 'स्वदेश',

'भूत', 'विकम', 'संग्राम', 'वीणा', 'स्वराज्य', 'हिन्दीपंच' तथा 'उग्र' आदि विभिन्न मासिक और साप्ताहिक पत्रों का सम्पादन किया।

उग्रजी ने कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, नाटक, पत्रकारिता आदि सभी क्षेत्रों में एक सबल रचनाकार की छबि को पुष्ट किया, लेकिन कथा लेखक के रूप में वे अधिक विख्यान रहे। उग्रजी का दौर सांस्कृतिक और राजनीतिक जागरण का दौर था। इस दौर में उन्होंने यथार्थ का वरण किया। दास्तान और किस्सागोई से मुक्त हुई कहानी को पौढ़ शारीरिक अस्तित्व प्रदान करने में उग्रजी का भी हाथ है। उनकी कहानियाँ कई बार राजनीतिक जागरण और सकियता का अप्रत्यक्ष हथियार साबित हुई।

पाण्डेय बेचन शर्मा की प्रमुख प्रकाशित रचनाए इस प्रकार है। नाटक - 'ईसा'। उपन्यास- 'घण्टा', 'चुम्बन', 'बुधुआ की बेटी', 'चोकलेट', 'दिल्ली का दलाल', 'अछूत', 'चन्द हसीनों के खुतूत', 'सरकार तुम्हारी आँखों में', 'जीजीजी', 'फागुन के दिन चार', 'शराबी'। कहानी- 'कला के पुरस्कार', 'बोली इमारत', 'चित्र-विचित्र', 'काल-कोठरी', 'यह कन्चन सी काया', 'ऐसी होली खेलों लाल', 'मुक्ता'। कविता- 'कंचन घट', 'धृवधारणा'। आत्मकथा- 'अपनी खबर'। निबंध- 'गाली', 'तुलसीदास', 'बुढ़ापा'। पत्र संकलन- 'फाईल-प्रोफाईल'। अन्य- 'गालिब-ए-उग्र'।

पाण्डेयजी ने यथार्थ के पैने तीर से जीवन की धृणित स्थितियों को भेदा है। जीवन और व्यक्ति की कूरतम तथा धिनौंनी विकृतियों को उघाडकर पाठकों की आँखों के सामने बिछा देने को ही रोमांचकारिणी कृतियों ने तत्कालीन मनचले युवकों को खूब रिझाया। कहा जाता है कि- उन दिनों विद्यार्थियों की औसी में उनकी पुस्तक 'चंद हसीनों के खुतूत' देखी जाने लगी। यथार्थ का एकांगी अर्थ ग्रहण कर वासनोत्तेजक साहित्य की सृष्टि की जाने लगी। इसलिए उग्रजी पर निरंतर प्रहार होते रहे। प्रवर्ती रचनाओं में उन्होंने थोडा-सा संयम अवश्य बरता, लेकिन यथार्थ के खूले प्रदर्शन से मुह नहीं मौडा। उनकी रचनाओं में भाषा और कथ्य के ट्रीटमेंन्ट के मिले-झुले स्वरूप का असर ऐसा था जिस में धृणित के प्रति तिरस्कार उपजता था।

पाण्डेय बेचन शर्मा की रचनात्मकता में आदर्शवादी अंकुश और कलात्मक संयम नहीं बल्कि व्यंजक व्योरों में लिपटी जीवन की कुरतम सच्चाई है। भाषा का मनमाना बहाव और

उसका आक्रोशात्मक मिज़ाज है। साधारण खडी बोली को अपने व्यक्तित्व की छाप से मढ़कर उन्होंने नये तेवर के साथ उसे समर्थ एवम् शक्तिवान बना दिया। हिन्दी साहित्य को यही उसकी सबसे बडी देन है।

२. ७. चतुरसेन शास्त्री का जीवन-कवन

आचार्य चतुरसेन शास्त्री का जन्म २६ अगस्त, १८९१ में उत्तर प्रदेश में के सिकन्दराबाद के पास 'चंदोक' नामक एक गाँव में हुआ था। श्री शास्त्री का बचपन का नाम 'चतुर्भुज' था। उनके पिताजी का नाम 'केवलराम ठाकुर' था तथा माताजी का नाम 'नन्ही देवी' था। आचार्य चतुरसेन शास्त्रीजी ने अपनी प्रायमरी तक की शिक्षा सिकन्दराबाद में ही ली थी। परंतु शास्त्रीजी का पढ़ने का उत्साह उन्हें राजस्थान तक ले गया। शास्त्रीजी ने स्नातक तक की शिक्षा राजस्थान के जयपुर में प्राप्त की। उन्होंने सन् १९१५ में 'आर्युविदाचार्य' की उपाधि प्राप्त की थी। सन् १९२७ में पाकिस्तान के लाहौर की कॉलेज में अध्यापक के रुप में नियुक्त हुए। परंतु इस कोलेज में उनका अपमान होने के कारण वह अपने ससुर की सहाय करने के लिए चले गये।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने आधुनिक भारतीय हिन्दी साहित्य में अपना बखुबी योगदान दिया है। उन्होंने हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में अपना स्थान प्राप्त किया है। 'वैशाली की नगर वधू', 'वयम् रक्षामः', 'गोली', 'धर्म पुत्र', 'सोना और खून', 'नीलमणि', 'अच्छी आदते', 'अपराजिता', 'आदर्श भोजन', 'निरांग जीवन' एवम् 'ईदो' आदि उनकी सुप्रसिद्ध रचनाएँ रही है। उनका प्रथम उपन्यास 'हृदय की परख' सन् १९१८ में प्रकाशित हुआ था। साथ-ही-साथ उनका दूसरा उपन्यास 'सत्याग्रह और असहयोग' सन् १९२१ में प्रकाशित हुआ था। इस उपन्यास लिखने के कारण यह साफ पता चलता है कि वह एक स्वातंत्र्य सेनानी जरूर रहे होंगे और इस बात को आगे दोहराये तो उनकी ऐसी कई कहानियाँ हैं, जो भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय हिन्दू-मुस्लिम जाति के बीच हुए साम्प्रदायिक तनाव की गाथा गाती है।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने अपने कहानी संग्रह 'मेरी प्रिय कहानियाँ' में भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय जो साम्प्रदायिक तनाव हुआ उस विषय में 'रजील' एवम् 'लम्बग्रीव' यह दो कहानियाँ लिखी है जो हदय विद्दारक है। उनकी 'रजील' कहानी में हमीदन नाम की एक वैश्या किस प्रकार अपना फर्ज अदा करती है और समाज में अच्छे माने जानेवाले आदमी किस प्रकार से जूठेपन का नकाब पहने हुए अपने आप को सही मानते है। इस विषय पर कहानीकार ने करारा व्यंग्य किया है। उसी प्रकार उनकी दूसरी कहानी 'लम्बग्रीव' में पतन और अनैतिकता के इस माहौल में महात्मा गांधी के रूप में मानवता की ज्योति जलती दिखाई पडती है। बापू का लक्ष्य रहा- विश्वशांति, अतूट प्रेम और दढ़ विश्वास। इस विश्वास को कायम बनाने का प्रयास शास्त्रीजी ने अपनी इस कहानी में किया है।

२. ८. कमलेश्वर का जीवन-कवन

कमलेश्वर का जन्म ६, जनवरी १९३२ में उत्तर प्रदेश के मणिपुर नामक एक गाँव में हुआ था। उन्होंने सन् १९५४ में इलाहाबाद युनिवर्सिटी में अनुस्ताक की उपाधि प्राप्त की थी। उन्होंने दूरदर्शन में लेखन कार्य भी किया है। सन् १९९० से १९९२ तक 'दैनिक जागरण' में काम किया था। उन्होंने सन् १९९६ से २००३ तक 'दैनिक भास्कर' और 'सारिका' में भी काम किया है। उनकी मृत्यु ७५ साल की आयु में सन् २००७ में हुई। उन्होंने 'दर्पण', 'एक कहानी', 'चन्द्रकांता' एवम् 'युग' जैसी टी. वी. सीरियलें भी लिखी है। साथ-ही-साथ कमलेश्वरजी ने 'सारा आकाश', 'आंधी', 'मोसम', 'रजनीगंधा', 'छोटी सी बात' एवम् 'मि. नटवरलाल' आदि जैसी बैनमून फिल्मे लिखीकर पूरे भारत वर्ष में अपना नाम अमर कर गये।

कमलेश्वरजी ने 'टी. वी. सीरियल' एवम् 'फिल्म' में ही नहीं अपितु हिन्दी साहित्य जगत् में भी अपना योगदान दिया है। उन्होंने 'कमलेश्वर की श्रष्ठ कहानियाँ', 'कितने पाकिस्तान', 'समग्र कहानियाँ', 'हिन्दुस्तानी गज़ले', 'देश-परदेश', 'वहीं बात' आदि कहानी

संग्रह लिखे है। साथ-ही-साथ 'आगामी अतीत', 'अम्मा' एवम् 'एक सडक सतावन गलियाँ' आदि जैसे उपन्यास लिखे है।

कमलेश्वरजी का 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास मानवता के दरवाजे पर इतिहास और समय की एक दस्तक है.....। इस उम्मीद के साथ कि भारत ही नहीं, दुनिया भर में एक के बाद दूसरे पाकिस्तान बनाने की लहु से लथपथ यह परम्परा अब खत्म हो। उसी प्रकार 'जिन्दा मुर्दे' (भारत विभाजन : हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ), 'कितने पाकिस्तान' (भारत विभाजन : हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ), 'धूल उड जाती हैं' (राजा निरबंसियाँ) एवम् 'भटके हुए लोग' (राजा निरबंसियाँ) आदि कहानियों में भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय हिन्दू-मुस्लिम दोनों जातियों के बीच जो दंगे-फसाद, मारकाट, बलातत्कार, आगजनी एवम् शरणार्थिओं की जो समस्या उपस्थित हुई है, यह यथार्थ रूप से प्रस्तुत करने का कहानीकार कमलेश्वरजी ने पूरे-पूरा प्रयास किया है।

कमलेश्वर ने अपने विद्यार्थी जीवन में ही 'राजा निरबंसिया' जैसी कहानियाँ लिखकर ख्याति अर्जित की थी। उन्होंने कई उपन्यास तथा कहानी संग्रह प्रसिद्ध है। उन्होंने 'कस्बे का आदमी', 'गर्मियों के दिन', 'जार्ज पंचम् की नाक', 'दिल्ली में एक मौत' और विभाजन पर लिखी गई कहानियों में 'जिन्दा मुर्दे', 'कितने पाकिस्तान', 'धूल उड जाती हैं, 'भटके हुए लोग' आदि विशेष प्रसिद्ध रहीं हैं। उनके कहानी संग्रहों में 'राजा निरबंसियाँ', 'कस्बे का आदमी', 'खोई हुई दिशाएँ', 'मास का दरिया', आदि उनके पूर्व प्रकाशित कहानी संग्रह हैं। विवेच्य अवधि में इनके कहानी संग्रहों में- 'बयान तथा अन्य कहानियाँ', 'कथा प्रस्थान', 'आजादी मुबारक' आदि।

'राते' बडी सशक्त और मन को धूने वाली कहानी है। दास्वाला नामक नायक अपनी शारीरिक भूख के लिए वैश्या की तीन पीढ़ियों को खरीदकर उनकी 'नथ' उतारता है। फंतासी शिल्प में रचित 'मानसरोवर के हंस' कहानी स्थापित श्रेष्ठ मूल्यों के लुप्त होते जाने की पीडा को व्यक्त करती है। ऐसा लगता है कि कमलेश्वर की प्रारंभिक मूल-प्रकृति उठ लोक-जीवन के खुरदरे रूप से रचनात्मक संवेदनाओं को ग्रहण करने वाली होती हैं। 'धूल उड जाती है' और 'मूर्दो की दुनिया' ऐसी ही कहानियाँ हैं। कमलेश्वर का निसाट नाम का एक पात्र जिन्दा

लोगों के बीच सचमुच मुर्दा है। उसका अत्यन्त ही सघन प्रेम एक बकरे के साथ है। यह पशु प्रेम की प्रवृति रचनात्मक सीट पर फणिश्वरनाथ रेणु, शिव प्रसादसिंह और रामदरश मिश्र की कहानियों में विकसित हुआ है। कमलेश्वर के 'कस्बे का आदमी' वास्तव में बहुत ही घुटन में जीता है। धुँआ, बेबसी, ठहराव, खामोशी, ऊब और भावहीनताओं के धुंध में 'आत्मा की आवाज' यदि खो जाति है तो क्या आश्चर्य? कस्बों के प्रतिक 'सीखचे' के भीतर डगमगाती परम्पराएँ है, लडखडाती मान्यताएँ हैं और काँपते विश्वासों की ठोकरे हैं, यहाँ 'नौकरी पेशा' लोग है।

'देवा की माँ' शीर्षक कहानी संवेदनाओं से पूर्ण जीवन चरित्र खडा करनेवाली बडी ही मार्मिक कहानी है। वह न युवती है, न बूढ़ी है, न धनी है, न गरीब है, न विधवा है न सधवा, वह न रोती है न हँसती है। वह अत्यंत सहज, मूक, नम्र, अद्‌भूत और दृढ़ चरित्र एक माँ है। इस देवा की माँ के रूप में कमलेश्वर ने एक पूरी पीढ़ी के नारी-सत्य को बिना लाग-लपेट प्रस्तुत कर दिया है। उसका बेटा देवा थोडी शिक्षित और छोटी नौकरी के बाद राजनीतिक जेलयात्रा तक की मंजिल तय कर अन्ततः निकम्मा निकल जाता है। इतने पर भी देवा की माँ कही से टूटती नहीं है, न उसका विश्वास टूटता है। ऐसी तरल भावनात्मक कहानी प्रेम, विश्वास, आस्तिकता, सहिष्णुता, श्रम, निष्कपटता और पवित्रता के सनातन धागों से बुनी यह कोमल मूल्य वाली कहानी कमलेश्वर को कथाकारों की अगली कतार में कर देती है। ऐसा लगता है कि गावों और कस्बों में जो जीवनमूल्य टूटने में बच गये है। कमलेश्वर उनका अन्वेषण करते हुए आगे बढ़ते है।

कमलेश्वर की भाषा मंजी हुई है। सादगी और खानगी दोनों के गुण उनकी भाषा में मिलते है। आवश्यकतानुसार उर्दू एवम् अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग मिलता है।

२. ९. कृष्णा सोबती का जीवन-कवन

कृष्णा सोबती का जन्म १८ फरवरी, १९२५ में हुआ था। उन्होंने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कहानीकार, निबंधकार एवम् उपन्यासकार के रूप में अपनी ख्याति स्थापित की है। उनका जन्म गुजरात में हुआ था परंतु वर्तमान समय में वह पश्चिमी पाकिस्तान में निवास करती है। उन्होंने हस्मत में रहते हुए 'हम हस्मत' नामक लेख में एक मित्र का चरित्रांकन प्रकाशित किया था। 'धारा से बीछूरी', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'यारो के यार', 'जिन्दगीनामा', 'मित्रो मरजानी' आदि उनके अनेक प्रसिद्ध उपन्यास रहे है। उपन्यासकार की भाँति उन्होंने कहानीकार के रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त की है। उनकी प्रसिद्ध कहानियों में 'नफिशा', 'सिक्का बदल गया', 'बादलों के घेरे', 'मेरी माँ कहाँ' आदि कहानियाँ रही है जिनमें से भारत पाकिस्तान विभाजन के संदर्भ में लिखी गई उनकी 'सिक्का बदल गया' कहानी में विभाजन से उत्पन्न मानवीय सम्बन्धों और मूल्यों के टूटने की स्थिति को रूपायित करती है। जिनके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार थे वे ही लोग दुश्मन बन गये। साहनी की जमीन, कुएँ, सम्पत्ति पर बँटवारे के कारण दूसरे लोगों की नजरें पडने लगती हैं। साहजी ने जिस शेरा को पाला-पोषा वहीं उनके घर का सोना-चाँदी लूटना चाहता था। शेरा में प्रतिहिंसा की भावना उत्पन्न हो जाती है। वह सोचता है कि हमारे ही भाइयों से सूद लेकर साहनी सोने-चाँदी की बोरियाँ तोला करते थे। साहनी के प्रति शेरा में बदले का भाव जागता हैं किंतु वह यह सोचकर रह जाता है कि उसने पिछले दिनों में ३०-५० कत्ल किये है पर अब वह ऐसा नहीं करेगा। ट्रंकें आ जाती हैं हिन्दू परिवारों को सीमा से बाहर ले जाने के लिए। थानेदार, दाऊद खाँ पटवारों और शेरा खडे है। कैम्प में पहुँचने पर साहनी सोचती है राज पलट गया, सिक्का बदल गया वह तो मैं वहीं छोड आई। साहनी को जितना दुःख राज बदल जाने और सिक्का बदल जाने का नहीं है उतना मानवीय सम्बन्धों के निरर्थक हो जाने का हैं। राज पलट गया अतः मानवीय मूल्य भी निरर्थक हो गये है। कहानी में करूणा, मानवीय सम्बन्धों की स्थिति, अन्तर्द्वन्द्व, द्विविधा और व्यंग्यात्मकता का मार्मिक संयोग

हैं। 'सिक्का बदल गया' मानवीय सम्बन्धों के बदल जाने का प्रतिक हैं। ऐसी उनकी दूसरी कहानी 'मेरी माँ कहाँ' में भी मानवीय सम्बन्धों और मूल्यों के प्रति किस प्रकार का खिलवाड किया गया है इस बात को प्रस्तुत किया है। 'सोबती की सोबत' में उनके मुख्य कार्यो का चयन किया गया हैं। उनका साहित्य आज अंग्रेजी और उर्दू भाषा में उपलब्ध हैं।

कृष्णा सोबती ने 'जिन्दगीनामा' उपन्यास के माध्यम से सन् १९८० में 'साहित्य अकादमी' और सन् १९९६ में अच्छ अकादमी का 'साहित्य अकादमी फेलोशीप' पुरस्कार प्राप्त किया है। वे खास करके अपना उपन्यास 'मित्रों मरजानी' की वजह से अधिक प्रचलित हुई। इस उपन्यास में उन्होंने एक विवाहित स्त्री की समस्याओं का वर्णन किया हैं। सन् १९९९ में उन्होंने आजीवन साहित्य सिद्धि के अंतर्गत 'कथा चुडामणी' पुरस्कार प्राप्त किया है। इस के अलावा सन् १९८१ में 'शिरोमणी', सन् १९८२ में 'हिन्दी अकादमी' सन् २०००-२००१ में 'शलाका' आदि पुरस्कार प्राप्त किए है जो उनकी सफल लेखनी का परिचय दे जाते है। तद उपरांत सन् २००८ में उन्हें 'समय सरगम' उपन्यास पर के. के. बिरला फाऊँन्डेशन द्वारा 'व्यास सम्मान' से सम्मानित किया गया है।

सन् २००५ में रीमा आनंद और मीनाक्षी स्वामी के द्वारा उनका कहानी संग्रह 'दिल-ओ-दानिश' का **'The Heart Has Its Reasons'** शीर्षक तहत अनुवाद किया गया है।

२. १०. अमृतलाल नागर का जीवन-कवन

हिन्दी उपन्यासों को नया मोड देनेवाले अमृतलाल नागर का जन्म १७ अगस्त, १९१६ को गोकुलपुरा, आगरा में हुआ था और निधन २३ फरवरी, १९९० में हुआ था। नागरजी एक जागरूक, संवेदनशील, कर्मठ, जिन्दादिल और आस्थावान व्यक्तित्व का पर्याय बने। उन्होंने अपने व्यक्तित्व को दो शब्दों- 'व्यस्त-मस्त' में विभाजित कर रखा था। लेखक ने उन्हें व्यस्त रखा और भंग ने उन्हें मस्त। जीवन को उसके समस्त अभिप्रायों में जानने की उत्कण्ठा से उन्होंने जीवन में गहरे

अन्तःप्रवेश किया और उन स्थितियों को जन्म दिया जो उन्हें संभव न होते हुए भी सम्भाव्य लगी। अमृतलाल नागर बीसवीं सदी के तीसरे दशक के उत्यन्त सशक्त कथाकार हुए है। उन्होंने हिन्दी कथा-साहित्य को सांस्कृतिक वैचारिकता, मानवीय अर्थवत्ता, भाषा की असीम शक्ति और अनूठी शैली के जरिये एक नया अन्दाज और नयी भंगीमा दी। उन्होंने उपन्यासों में अपनी जातीय परंपरा को न केवल विकसति किया बल्कि उसका एक स्वस्थ सामाजिक परिप्रेक्ष्य भी निर्मित किया। अपनी किस्सागोई शैली के कारण उन्होंने अपना एक विशाल पाठक वर्ग तैयार किया और वे भारतीय आख्यान परंपरा के आधुनिक मनीषी कहलाये।

पारिवारिक कठिनाईयों के कारण नागरजी उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर पायें लेकिन उनकी साहित्यिक अभिरुचियों और तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलन के ज़ोर ने उनकी सृजनशीलता को प्ररित किया। उनकी बाल चेतना ने जब तत्कालीन वातावरण को समझना शुरू किया जब तक लखनऊँ राष्ट्रीय आन्दोलन की चपेट में आ चुका था। जलियावाला बाग हत्याकाण्ड हो चुका था। राजनीति में गांधीजी पदार्पण कर चुके थे। गली-गली में यह गीत गूँज रहा था- 'हम तो खद्दर की लैंब सुराज, हमार कोई का करि हैं।' ये पक्तियाँ नागरजी के मनमें भी नया जोश भर दती। १९२८ में इतिहास प्रसिद्ध 'साइमन कमीशन' ने नागरजी की अभिव्यक्ति की ताकत को ठोस जमीन दी। 'साइमन कमीशन' दौरा करता जब लखनऊँ पहुँचा तो उसके विरोध में वहाँ जुलूस निकला। पंडित नेहरू तथा पंडित गोविन्द वल्लभ पंत उसके अगुआ थे। जुलूस पर पुलिस ने लाठियाँ बरसाई। भगदड़ में नागरजी भी घायक हुए और इन्हीं उत्तेजित क्षणों में उनकी पहली तुकबन्दी फूट-कब लौं कहाँ लाठी खाया करें, कब लौं, कहाँ जेल सहा करिये। तीसरे दिन 'दैनिक आन्दोलन' में छपी उनकी इस कविता ने उनकी लेखनीय शक्ति को प्रोत्साहित किया।

नागरजी ने गद्य की सभी विधाओं में उत्कृष्ट रचनाएँ दीं लेकिन उन्हें लोक प्रियता मिली उपन्यासों के जरिये। 'बूंदे और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' ने उन्हें हिन्दी साहित्य जगत का महत्वपूर्ण स्तंभ बना दिया। वे अपनी कथात्मक कृतियों में एक चिन्तनशील कलाकार के रूप में उभरे। उनका चिन्तक व्यक्तित्व समाज की विद्रपताओं और विसंगतियों से संघर्ष करता रहा।

भारतीय जनमानस को आन्दोलित करनेवाले सामयिक प्रश्नों को उन्होंने अपनी कृतियों में उठाया और उन्हें समाधान की दिशा दी।

वास्तविक जीवन में अर्जित अनुभवों की पोटली नागरजी ने अपने अन्तर्मन में संजो रखी थी। अनुभवों की इसी पोटली को नागरजी ने किस्सागोई से जोड़कर तरह-तरह से अपने उपन्यासों में खोजा। इसीलिए डॉ. रामविलास शर्मा ने माना कि 'जिस प्रतिभा से लोककथा गढ़ी जाती है नागरजी के पास उसका अक्षप भण्डार है।

पत्रकारिता का क्षेत्र भी नागरजी की बहुमुखी प्रतिभा से अछूता नहीं रहा। वे 'सुनीति', 'सिनेमा समाचार' और 'चकल्लस' आदि पत्रिकाओं के सम्पादन से सम्बन्ध रहे। नागरजी १९४० में 'सिनेरियों लेखक' के रूप में बम्बई पहुँचे। लेकिन फिल्मी लोग और फिल्मी जीवन छोड़कर उत्तर प्रदेश में आकर जम गए और उन्होंने तर्क दिया- 'अब बालू पर लकीरें नहीं बनाउँगा। गांधीवादी आदर्श में चलती दुकान बढ़ा दी।

नागरजी की बहुमुखी सृजनात्मक प्रतिभा ने गद्य की सभी विधाओं को अपनाया। उनकी प्रकाशित रचनाएँ इस प्रकार है। कहानी एवम् रेखाचित्र- 'वाटिका', अवशेष', 'नवाबी मसनद', 'तुलाराम शास्त्री', 'शेठ बाँकेमल', 'आदमी नहीं नहीं', 'पाँचवा रास्ता', 'एक दिल', 'हजार दास्ता', 'एटम बम', 'पीपल की परी', 'कालखण्ड की चोरी', 'मेरी प्रिय कहानियाँ', 'भारत पुत्र नौरंगीलाल'। उपन्यास- 'महाकाल', 'बूँद और समुद्र', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नूपुर', 'अमृत और विष', 'मानस का हंस', 'नाट्यो बहुत गोपाल', 'खंजन नयन', 'बिखरे तिनके', 'अग्निगर्भा', 'करवट', 'पीढ़ियाँ', 'सात घूंघटवाला मुखडा', 'एकदा नैमबारण्ये'। रिपोताज-'भेंटवार्ता एवम् संस्मरण-'गदर के फूल', 'ये कोठेवालियाँ', 'जिनके साथ जियाँ'। नाटक- 'परित्याग', 'युगावतार', 'नुक्कड पर'। जीवनी- 'चैतन्य महाप्रभु'। बाल साहित्य- 'नटखट झरोखे से', 'बाल महाभारत'। अनुवाद- 'बिसाती', 'प्रेम की प्यास', 'काला पुरोहित', 'आँखों देखा गदर', 'दो फक्कड सारस्वत'।

नागरजी अपनी रचना-प्रकिया में किसी वाद या दूराग्रहों के फेर में नहीं पडे। उन्होंने प्रेमचंद के चिन्तन को नया आयाम दिया। अपने संवेदित युगबोध को उन्होंने युगानुरूपी जीवन-मूल्यों के प्रकाश में अभिव्यक्ति दी। उन्होंने स्वतंत्रता-पूर्व का जीवन भी जिया और स्वातंत्र्योत्तर

भारत को तथा आगे आनेवाले भारत को भी अपनी खुली आँखों से देखा इसीलिए वे अपने कथा-साहित्य में अतीत, वर्तमान और भावी तीनों को समेटने की शक्ति रखते है। उनका साहित्य ऐतिहासिक तथा सामाजिक जीवन के यथार्थ को समझने-समझाने का सशक्त माध्यम है। उनकी औपन्यासिक कृतियों में अपने समय का यथार्थ सामाजिक संचरना और मानवीय संबंध सहज और समन्वित रूप में अभिव्यक्त हुए है। आजाद हिन्दुस्तान के मध्यमवर्गीय समाज की सच्ची धडकने उसमें मौजूद है। लोक-चेतना और लोक मंगल की समन्वयकारी भूमि नागरजी की रचनाओं में परिलक्षित होती है लेकिन उनका लोक मंगल कहीं भी व्यक्ति की उपेक्षा नहीं करता क्योंकि उनकी दृष्टि में 'एक ही चीज के दो नाम है व्यक्ति और समाज-मानव और मानवता'।

मातृभाषा गुजराती होने के बावजूद नागरजी ने हिन्दी में सोचा और हिन्दी में अभिव्यक्त किया। हिन्दी में जीवन को पूर्ण समग्रता में उजागर करनेवाली भाषा रची। भारतीय संस्कृति के समन्वयात्मक भावना से ओत-प्रोत प्रभावी भाषा के प्रतिभा-सम्पन्न रचनाकार के रूप में प्रतिस्थापित हुए। उनकी कालजयी रचनाओं ने हिन्दी भाषा साहित्य को तथा आयाम और नया प्रकाश दिया। किसी आलोचक ने ठीक ही कहा है- 'नागरजी की लेखनी में जो कुछ प्रकाश में आया वह आइसबर्ग के समान है। जितना दृष्टि-पथ में है उससे कई गुना पथ से बाहर।'

२. ११. भीष्म साहनी का जीवन-कवन

भीष्म साहनी का जन्म ८ अगस्त, ई. स. १९७५ में रावलपिंडी के एक सीधे-सादे धर्मभीरू मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। मूलतः साहनीजी का परिवार पंजाब के साहपुर जिल्ले में स्थित 'भेरा' नामक कस्बे के रहनेवाले थे। 'भेरा' जेहलम नदी के तटपर स्थित सदियों पुराना मध्य युगिन कस्बा था। जिसे छोडकर उनके परिवार रावलपिंडी में बस गये थे। साहनीजी का बचपन रावलपिंडी में ही बिता था। उनके पिता श्री हरबंसलाल साहनी आशावादी, पुरुषार्थ प्रेमी और आर्य समाजी

थे। उनके पिताजी और माता श्रीमती लक्ष्मीदेवी दोनों समाज सुधारक के कार्यो में सक्रिय भाग लेते थे। भीष्म साहनी श्री हरबंसलाल साहनी की सातवीं संतान थे। पहले पांच बहेनों के बाद स्वगीय बलराज साहनी पैदा हुए थे। उन दिनों पंजाब के आर्य समाज के सामाजिक परिवार में बच्चों के नाम रामायन, महाभारत से चुन-चुनकर रखने की प्रथा चल पडी थी। इसीलिए उनका नाम भीष्म रखा गया।

अपने परिवेश के संदर्भ में साहनीजी कहते हैं कि घर का माहोल एक खास तरह का था। इसमें ब्रह्मचारी की पीली धोती थी। हवन-संध्या, उपदेश थे और आर्य समाज का साप्ताहिक सत्संग था और वहाँ मास खाना निषिहम था। स्त्री की ओर आँख उठाकर देखना, फिल्म देखना भी निषिहम था। उनके छोटे से परिवार में सादेपन पर जोर था।

साहनीजी का व्यक्तित्व उनके परिवालों के साहित्यिक वातावरण के अनेक गुणों से समयुक्त था। घर में साहित्यिक वातावरण पहले से ही था। पिताजी शेख-शादि के प्रमी थे और माँ के पास कहानी, गीतों, लोकोक्तियाँ का खजाना था।

साहनीजी की हिन्दी और संस्कृत की प्रारंभिक शिक्षा घर में हुई थी। उर्दू और अंग्रजी की शिक्षा पहले रावलपिंडी के एक श्रेष्ठ पाठशाला में और बाद में लाहौर के एक सुप्रसिद्ध गवर्मेन्ट कोलेज में हूई थी। लाहौर गवर्मेन्ट कोलेज में १९३७ में एम. ए. की परीक्षा अंग्रजी विषय लेकर पास की। फिर पंजाब विश्वविद्यालय से पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की। एम. ए. की परीक्षा पास करने के बाद उन्हीं कोलेज में अध्यापक के साथ-साथ उन्होंने कुछ दिनों तक व्यापार भी किया। १५ अगस्त, १९३७ को पंजाब के दो टूकडे हो गए। उनका सारा परिवार रावलपिंडी से उजडकर अलग-अलग जगह बिखर गया।

सन् १९४३ में साहनीजी की शादी श्रीमती शीलादेवी से हुई। विवाह के पूर्व बी. ए. के वर्ग में साहनीजी ने शीला को पढ़ाया भी था। भीष्म साहनी स्वाभाव से बेहद विनम्र थे। सहानुभूति और सहनशीलता उसमें ज्यादा थी।

भीष्म साहनी केवल उपन्यासकार, कहानीकार और नाट्यकार ही नहीं रहें बल्कि साहित्यिक व्यक्तित्व के साथ-साथ उनमें एक जन्मजात अभिनेता भी छिपा हुआ है। वह स्कूल-

कोलेज के दिनों में और बाद में भी खूब अभिनय करते रहे। होकी खेलने का उन्हें बेहद शौक था जिस में उन्होंने कईबार मेडल भी हाँसिल किया था।

भाग्यरेखा, पहला पाठ, भटकती राख, पट्टरियाँ, शोभायात्रा, निशाचर, पाली, डायन, वाङ्यू, प्रतिनिधि कहानियाँ आदि साहनीजी के विभिन्न कहानी संग्रह है। जिनमें लगभग ११० के करीब कहानीयाँ प्रकाशित हुई है। साहनीजी की कहानी 'अमृतसर आ गया है' में स्थिति-सापेक्ष और परिस्थिति-सापेक्ष क्रूर मानसिकता का परिचय देती है। कहानी में एक दुबला-पतला बाबू भौगोलिक स्थिति बदलते ही हत्यारा बन जाता है और उससे पहले मुसलमान अपने क्षेत्र में उग्र थे और बाबू भयभीत थे। उसी प्रकार उनकी दूसरी कहानी 'निमित्त' में भी भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय हुए दंगे-फसाद, मार-काट, बलात्कार और आगजनी के हुए क्रूर कृत्य को प्रस्तुत किया है। 'तमस', 'झरोखें', 'कडियाँ', 'बसंती', 'कुत्तो', 'मय्याराम की माडी' आदि उपन्यास लिखे है। 'माधवी', 'हानूश', 'कबिरा खडा बाजार में', 'मुआवजे' आदि नाटक लिखे है। जीवनी- 'मेरे भाई बलराज साहनी'। बाल साहित्य- 'गुलेर का खेल', 'वापसी'। निबंध संकलन- 'अपनी बात' आदि प्रकीर्ण साहित्य लिखे है। आधुनिक हिन्दी उपन्यास का संपादन किया है।

इस प्रकार भीष्म साहनीजी ने अपने साहित्यिक जीवन काल में हिन्दी साहित्य को बडा ला-जवाब योगदान दिया है।